ॐ

यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्येवानुपश्यति।

सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते॥६

जो मनुष्य सब प्राणियों को आत्मा में देखता है और सब प्राणियों में आत्मा को देखता है, उसके पश्चात् किसी से घृणा नहीं करता।

हनुमान् जयन्ती

परम श्रद्धेय श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज

यत्र यत्र रघुनाथकीर्तनं,
तत्र तत्र कृत मस्तकांजलिम्।
बाष्पवारि परिपूर्ण लोचनं,
मारुतिं नमत राक्षसान्तकम्।।

अर्थ : हम मारुति श्री हनुमान् को नमन करते हैं। जहाँ-कहीं भगवान् राम का कीर्तन होता है, वह अपने दोनों हाथों को मस्तक से ऊपर उठा कर जोड़ लेते हैं तथा उनके नेत्रों से आनन्दाश्रुओं की धारा प्रवाहित होने लगती है।

समस्त भारतवर्ष में श्री हनुमान् की पूजा की जाती है केवल उनकी या श्री राम के साथ उनकी पूजा की जाती है। भगवान् राम के प्रत्येक मन्दिर में श्री हनुमान् की मूर्ति अवश्य होती है। वह भगवान् शिव के अवतार हैं। वह पिता पवनदेव तथा माता अंजनी देवी के पुत्र हैं। पवनसुत, मारुतसुत, पवनकुमार, बजरंगबली तथा महावीर उनके अन्य नाम हैं।

वह राम-नाम के जीवन्त मूर्त रूप हैं। वह एक आदर्श नि:स्वार्थ कार्यकर्ता तथा एक सच्चे कर्मयोगी थे जो सदा निष्काम भाव से तथा प्रभावशाली ढंग से कर्म का सम्पादन किया करते थे। वह एक महान् तथा उत्कृष्ट ब्रह्मचारी थे। उन्होंने भगवान् राम की सेवा पवित्र प्रेम से तथा भक्तिपूर्वक की और बदले में कुछ भी प्राप्त करने की कामना नहीं की। उनका जीवन श्री राम की सेवा के ही लिए था। वह विनम्र, शूरवीर तथा विवेकी थे। उनके व्यक्तित्व में समस्त दिव्य गुण समाविष्ट थे। जो कार्य दूसरे लोग नहीं कर सके, वह उन्होंने कर दिखाया। उन्होंने राम-नाम का जप करते हुए सागर पार कर लिया, लंका नगरी को जला डाला, संजीवनी बूटी ला कर लक्ष्मण को जीवन-दान दिया, अहिरावण का वध करके श्री राम तथा लक्ष्मण को पृथ्वी के नीचे के लोक से ले आये।

श्री हनुमान् में भक्ति-भाव, शक्ति, ज्ञान का तेज, नि:स्वार्थ सेवा की मनोवृत्ति, ब्रह्मचर्य-शक्ति, निष्कामता की भावना ये सभी गुण थे। उन्होंने अपनी शूरवीरता तथा बुद्धिमत्ता का कभी बखान नहीं किया। उन्होंने रावण से कहा था ''मैं श्री राम का विनम्र दूत हूँ। मैं श्री राम की आज्ञा से यहाँ उनकी सेवा करने तथा उनके कार्य को पूरा करने के लिए आया हूँ। उनकी कृपा से मुझे किसी प्रकार का भय नहीं है। मुझे मृत्यु का भी भय नहीं है। उनकी सेवा करते हुए यदि मृत्यु आ भी जाये, तो मैं उसका स्वागत करूँगा।''

कितने विनम्र थे हनुमान् ! कितनी निष्ठा थी उनमें श्री राम के प्रति! उन्होंने कभी नहीं कहा ''मैं वीर हनुमान् हूँ। मैं कोई भी कार्य तथा सभी कार्य कर सकता हूँ।''

----

* इस वर्ष हनुमान् जयन्ती २ अप्रैल २००७ को पड़ रही है।

स्वयं भगवान् राम ने श्री हनुमान् से कहा था ''मैं तुम्हारा अत्यधिक ऋणी हूँ। ओ शूरवीर! तुमने अद्भुत अतिमानवीय कार्य पूरे करके दिखाये हैं। बदले में तुमने कभी कुछ नहीं चाहा। सुग्रीव को उसका राज्य वापस मिल गया। अंगद युवराज बन गये। विभीषण लंका के राजा बन गये। लेकिन तुम तुमने कभी भी कुछ प्राप्त करने की कामना नहीं की। तुमने सीता द्वारा दिये गये बहुमूल्य मुक्ता-हार तक को फेंक दिया। तुम्हारा ऋण मैं कैसे चुकाऊँ! मैं सदा तुम्हारा ऋणी बना रहूँगा। मैं तुम्हें चिरंजीवी होने का वरदान देता हूँ। सब भक्त तुम्हें उतना ही मान-सम्मान देंगे, जितना वे मुझे देते हैं। वे तुम्हारी उसी प्रकार पूजा करेंगे, जिस प्रकार वे मेरी पूजा करते हैं। मेरे मन्दिरों के द्वार पर ही तुम्हारी मूर्ति स्थापित की जाया करेगी पहले तुम्हारी ही पूजा होगी। जब कभी मेरी कथा कही जायेगी, उससे पूर्व तुम्हारी महिमा का गान किया जायेगा। जो मैं भी नहीं कर सकता, वह तुम कर सकोगे।''

लंका में सीता माता की सफलतापूर्वक खोज करने के बाद जब हनुमान् भगवान् राम के पास आये थे, तब उन्होंने हनुमान् की इसी प्रकार से प्रशंसा की थी। उस समय हनुमान् को किंचित् भी गर्वोल्लास का अनुभव नहीं हो रहा था। श्री राम के पास पहुँचते ही वह उनके चरणों पर गिर गये थे।

श्री राम ने उनसे पूछा था ''ओ वीर! तुमने समुद्र कैसे पार किया?''

हनुमान् ने विनम्रतापूर्वक कहा ''आपके पवित्र नाम की शक्ति से, मेरे नाथ!''

श्री राम ने दोबारा पूछा था ''लंका-दहन तुम कैसे कर पाये? कैसे तुमने अपनी रक्षा की?''

हनुमान् का उत्तर था ''नाथ, यह सब आपकी कृपा से हो पाया।''

कितनी असाधारण विनम्रता थी श्री हनुमान् में!

ऐसे व्यक्तियों की कमी नहीं है जो सेवा करने के बदले धन चाहते हैं। कुछ लोग धन नहीं चाहते, परन्तु नाम कमाना और प्रसिद्धि प्राप्त करना चाहते हैं। कुछ लोग इन्हें नहीं चाहते, परन्तु दूसरों से अनुमोदन प्राप्त करना या प्रशंसित होना चाहते हैं। जो लोग यह भी नहीं चाहते, वे अपने कार्यों का बखान तो करते ही हैं। हनुमान् इन सबकी तुलना में अतिश्रेष्ठ थे। इसी कारण उन्हें आदर्श कर्मयोगी तथा अद्वितीय भक्त कहा जाता है। उनका जीवन आदर्श सीखों से भरा पड़ा है। हमें यथासम्भव हनुमान् के उत्कृष्ट उदाहरण का अनुकरण करना चाहिए।

श्री हनुमान् का जन्म-दिवस (हनुमान्-जयन्ती) चैत्र (मार्च-अप्रैल माह) की पूर्णिमा को मनाया जाता है।

इस अवसर पर श्री हनुमान् की पूजा करें। व्रत रखें। हनुमान् चालीसा का पाठ करें। दिन-भर राम-नाम का जप करें। श्री हनुमान् आप पर अति प्रसन्न होंगे तथा आपको जीवन के समस्त कार्यों में सफल होने का आशीर्वाद देंगे।

श्री हनुमान् तथा उनके स्वामी श्री राम की जय हो, जय हो!

(अनुवादक : स्वामी रामराज्यम्)

अपनी अन्त:प्रेरणाओं को सदा जाँचते रहें

परम पावन श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज

ईश्वर की प्रेरणा से प्रात:काल के इस समय में वही चर्चा हम करते हैं जो जीवन के इस समय में आपके लिए उपयोगी है। समस्त वाणी, शब्द और विचार उन्हीं की प्रेरणा से उत्पन्न होते हैं। वही तो हैं जो व्यक्ति के अन्तर्मन में प्रविष्ट हो कर इसमें ज्ञान की देवी सरस्वती की सुप्त शक्ति को जागृत कर देते हैं और जो वह चाहते हैं, वही प्रदान कर देते हैं।

प्रत्येक व्यक्ति अपनी आन्तरिक अवस्था के अनुसार ही अपनी निजी बुद्धि की कुशाग्रता के, अपनी गम्भीरता के, एकाग्रता के, अन्तर्ज्ञान की गहनता के और ग्राह्य शक्ति की सूक्ष्मता के अनुसार ही इन उद्घोषित सत्यों को प्राप्त करता है। आप सब उपनिषदों की उस कथा को जानते हैं जिसमें देव और असुर प्रजापति ब्रह्मा से उपदेश प्राप्त करने जाते हैं। दोनों को एक ही उपदेश दिया जाता है और दोनों अपनी-अपनी आन्तरिक स्थिति के अनुसार उसका अर्थ ग्रहण करते हैं। यह एक शाश्वत सत्य है। यह ऐसा तथ्य है जो कभी परिवर्तित नहीं होता।

अत: उद्घोषित सत्य को साधक कैसे ग्रहण करता है, यह इस पर निर्भर करता है कि साधक कैसा है। और कई बार तो यह मन ही अद्भुत होता है। यह केवल वही ग्रहण करता है जो इसे मान्य होता है। और उससे यह बड़ी सहजता से कतरा कर निकल जाता है, अथवा छोड़ ही देता है, जो उसे रुचिकर नहीं लगता। सकारात्मक शब्दावली में कहें हंस की भाँति नीर-क्षीर-विवेक तब तो यह बहुत अच्छा है, किन्तु कई बार तो यह उलटा ही कार्य करता है। वह सब-कुछ जो अच्छा है किन्तु रुचिकर नहीं अथवा सुविधाजनक नहीं, वह उसे आराम से छोड़ जाता है। मन ऐसा ही है। व्यक्ति को भली-भाँति समझ लेना चाहिए कि यह किस प्रकार कार्य करता है।

अपने भजन 'कर्मयोग' में गुरुदेव ने बल देते हुए पुन:-पुन: कहा है ''सदा अपने आन्तरिक उद्देश्यों का निरीक्षण करो।'' यदि साधक उन्नति करना चाहता है, तो यह अत्यन्त आवश्यक है; क्योंकि मन सदा ही कपटी है। आप भले ही ऐसे कार्य में संलग्न हों जो बहुत भला दिखायी देता हो, धार्मिक लगता हो, प्रशंसनीय हो, किन्तु केवल आप ही जानते हैं कि आपका उद्देश्य क्या है। अथवा हो सकता है, आपको भी न पता हो। यदि आप अपनी अन्तर्निहित प्रेरणाओं की जाँच नहीं करते, तो आप स्वयं को छलते रहेंगे, धोखा देते रहेंगे। सम्भव है, आपको इसका पता भी न चले।

इसीलिए गुरुदेव ने हमें दैनिक आत्म-निरीक्षण, आत्म-विश्लेषण करने को, अपने आन्तरिक उद्देश्यों का परीक्षण करने को कहा है। कोई भी कार्य यदि संसार को बहुत अच्छा प्रतीत हो रहा है, तो यह इतना मात्र ही पर्याप्त नहीं है; क्योंकि संसार तो अनभ्यस्त दृष्टि से देखता है। वह आपकी प्रशंसा कर सकता है।

किन्तु क्या आप यहाँ अज्ञानी लोगों की प्रशंसा एकत्रित करने के लिए आये हैं, ऐसे लोगों की जो स्थूल दृष्टि लिये हुए है, जो किसी भी वस्तु की गहराई में नहीं जाते? आप तो प्रशिक्षित साधक हैं। आपको अपने विषय में गहन समझ होनी और स्वयं का परीक्षण करना आवश्यक है ''मैंने यह ऐसे क्यों किया? मेरा इसमें अन्तर्निहित लक्ष्य क्या था?'' आन्तरिक उद्देश्य और अन्तर्निहित अभिप्राय क्या था, यह सरलता से दिखायी नहीं देगा। अत: इसकी जाँच करनी पड़ेगी। 'जाँच' का अर्थ है गहराई से देखना, 'संवीक्षण' करना।

पासपोर्ट अधिकारी पासपोर्ट का संवीक्षण करता है। बैंक अधिकारी बड़े मूल्य वर्ग के नोट का बड़े ध्यान से संवीक्षण करता है। वह अत्यन्त ध्यानपूर्वक कुछ खोजने के लिए देखते हैं। और गुरुदेव ने कहा है ''सदा अपने निहित आशय की परख करें सदैव।'' तब आप लाभ में रहेंगे। अन्यथा आपको हानि उठानी पड़ेगी। आप अधिक-से-अधिक गहन गर्त में गिरते चले जायेंगे अन्य सब भले ही आपको अत्यन्त भला समझते रहें। उदाहरणतया, कई बार हम किसी को दान देते हैं, अथवा किसी पर दया करते हैं, तो हमारा उसके पीछे कोई गुप्त हेय उद्देश्य रहता है; हो सकता है कि जिस पर दया दिखायी जा रही है, उस पर अधिकार करने की चाह हो।

अत: एक सच्चा साधक यदि इस जगत्-प्रपंच की तुच्छ वस्तुओं से परे कुछ प्राप्त करने के लिए उच्च से उच्चतर जाना चाहता है और अपनी आध्यात्मिक उन्नति चाहता है, तो शत-प्रति-शत सावधानी की, जागरूकता, सतर्कता, एकाग्रता और स्वयं के प्रति निश्छलता अनिवार्य है। इसलिए अपनी आन्तरिक प्रेरणाओं की सदैव जाँच कीजिए।

यह कठिन प्रतीत हो सकता है। इसके लिए त्याग-भावना की भी आवश्यकता है। इसके लिए उस सबके निरन्तर त्याग की आवश्यकता है जो मात्र सुखद, आकर्षक और रुचिकर प्रतीत होने वाला है। केवल तब ही यह सम्भव है। यदि आपमें आन्तरिक बल है, यदि आप नचिकेता की भाँति सच्चे साधक हैं, केवल तभी यह सम्भव है कि आप यह सतत त्याग कर सकें। घर छोड़ कर ऋषिकेश आ जाना एक बड़ा त्यागपूर्ण कार्य है, किन्तु यह तो केवल प्रारम्भ है यहाँ से अब आन्तरिक त्याग आरम्भ होता है।

यह अन्तिम श्वास तक चलने वाला सतत त्याग है प्रतिपल, प्रत्येक पग पर। यह सरल नहीं है। कोई भी यह करना नहीं चाहता, क्योंकि यह सुखकर नहीं है। कई बार अवश्य ही यह कष्टप्रद हो जाता है। आपको स्वयं अपने-आपसे संघर्ष करना पड़ता है। केवल तभी यह त्याग आपकी आदत बन पाता है, यह आपका स्वभाव हो जाता है। इसकी कठिनता फिर समाप्त हो जाती है। यह स्वाभाविक सहजबोध हो जाता है। तब फिर यह कोई समस्या नहीं रह जाता।

यदि आपमें यह त्याग-भावना है, तब सुखकर का त्याग सम्भव हो जाता है। ''तस्मात् एतत् त्रयं त्यजेत्''(इसलिए व्यक्ति को इन तीनों काम, क्रोध और लोभ को त्याग देना चाहिए)। इसका अर्थ है कि आप उस सब-कुछ का त्याग करते चले जायें जो आपके मार्ग में खड़ा हुआ है। किन्तु सर्वप्रथम आपको यह जानना अत्यावश्यक है ''मेरे मार्ग में कुछ बाधा बन कर खड़ा हुआ है।''

यदि मुझे मेरा अभिप्राय ही पता नहीं है, तब तो यह पूर्ण बाधा है, एक लौह दीवार मेरे मार्ग में खड़ी हुई है। इसे निश्चित रूप से देखना और पहचानता है। केवल तभी आपका इसके प्रति दृष्टिकोण बदलेगा। ''ऐसा कुछ भी, जो अनाध्यात्मिक आशय है, मुझे कार्य करने को प्रेरित नहीं करेगा। यह मैं निश्चय करता हूँ। जो-कुछ भी मेरे सिद्धान्तों के, मेरी साधना के, मेरे दिव्य जीवन के विपरीत होगा, उसे अपने किसी भी कर्म करने को प्रेरित करने वाला बनने नहीं दिया जायेगा। और मैं निश्चित रूप से निरीक्षण करूँगा, गहराई से देखूँगा, और दृढ़ रहूँगा कि मेरी अन्त:प्रेरणा भी शुद्ध, पवित्र, उदात्त, उच्च, श्रेष्ठ और पुनीत हो, ठीक उसी प्रकार जैसे मेरा लक्ष्य भगवान् स्वयं हैं!''

अत: हम गुरुदेव का यह आदेश सदैव ध्यान में रखें और सदा अपनी आन्तरिक प्रेरणाओं का परीक्षण करते रहें। इस प्रकार हम विवेकशील बनें, स्वयं को हानि से बचायें और तत्परता से लक्ष्य की ओर अग्रसर हों!

(अनु. श्रीमती सुधा भारद्वाज)

भक्तियोग में विविध भाव

भक्ति में छह प्रकार के भाव होते हैं। शान्त-भाव में भक्त शान्त रहता है। वह नाचता-कूदता नहीं है। वह अत्यधिक भावुक नहीं होता है। उसका हृदय प्रेम तथा आनन्द से ओत-प्रोत रहता है। भीष्म शान्त-भक्त थे।

श्री हनुमान् दास्य-भक्त थे। उनमें दास्य-भाव था। वे जी-जान से भगवान् राम की सेवा करते थे। वे अपने स्वामी को सभी सम्भाव्य उपायों से प्रसन्न रखते थे तथा उनकी सेवा में ही सुख और आनन्द का अनुभव करते थे।

सख्य-भाव में भगवान् भक्त के मित्र बनते हैं। अर्जुन का भगवान् कृष्ण के प्रति यही भाव था। इस भाव में भक्त भगवान् से समान स्तर पर व्यवहार करता है। अर्जुन तथा श्रीकृष्ण एक घनिष्ठ मित्र के रूप में साथ-साथ उठते-बैठते, खाते-पीते, बातें करते और भ्रमण करते थे।

वात्सल्य-भाव में भक्त भगवान् को अपनी सन्तान समझता है। यशोदा का भगवान् श्रीकृष्ण के प्रति यही भाव था। इस भाव में भय नहीं होता है; क्योंकि भगवान् भक्त के लाड़ले शिशु होते हैं।

पाँचवाँ भाव सखी-भाव है। यह गोपी-भाव के नाम से भी प्रसिद्ध है। गोपियाँ राधा तथा कृष्ण के साथ अपना तादात्म्य स्थापित कर उनके पुनर्मिलनजन्य आनन्द का रस लेती थीं।

अन्तिम माधुर्य अथवा कान्ता-भाव है। यह परमात्मा को सर्वोत्कृष्ट कोटि का भक्तिपुर:सर नैवेद्य है। इसमें प्रेमी तथा प्रेयसी दोनों एक हो जाते हैं। यद्यपि इसमें भक्त तथा भगवान् परस्पर अभिन्न अनुभव करते हैं, तथापि पारस्परिक प्रेम-केलि के आनन्द का रस लेने के लिए वे अपना पार्थक्य-भाव बनाये रखते हैं। यही अभेद में भेद तथा भेद में अभेद है। इसमें पति तथा पत्नी का-सा सम्बन्ध रहता है। जयदेव, मीरा तथा अण्डाल का यही भाव था।

स्वामी शिवानन्द

प्रणव ओंकार : ६

परम पावन श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज

'ॐ' का उच्चारण कैसे करें यह प्रश्न मन में उठ सकता है। 'ॐ' की महिमा को हृदयंगम करने का हमने प्रयास किया है; किन्तु इसका उच्चारण किस विधि से करें? प्रणव-नाद करते समय हमें कुछ चिन्तन भी करना है क्या? एक सामान्य प्रक्रिया जो प्रणव-नाद के लिए निर्दिष्ट है, वह यह है कि प्रणव-नाद की अवधि न तो अधिक दीर्घ हो, न ही अल्प। निःसन्देह प्रणव-नाद अल्प, मध्यम और दीर्घ मात्रा में हो सकता है; किन्तु ध्यान के व्यावहारिक पक्ष को ध्यान में रखते हुए मैं प्रणव-नाद को मध्यम गति से अपनाने का निर्देश करूँगा। मात्रा को इस प्रकार से समझ लें :

हाथ की मुट्ठी को घुटने के चारों ओर घुमायें और एक चक्र पूर्ण होने पर घुटने पर उँगलियों से थपकी दें मुट्ठी को घुमाने की गति न अधिक तीव्र हो, न ही अधिक धीमी। बस, यही एक मात्रा है। इस प्रकार चक्र दो बार बनाने से दो मात्रा और तीन बार में तीन मात्रा की कालावधि मानी जाती है। एक मात्रा की कालावधि में किया गया प्रणव-नाद अल्प, दो मात्रा में मध्यम और तीन मात्रा का प्रवण-नाद दीर्घ माना जाता है। आपको जो भी सहज प्रतीत हो, वैसा करें। हठपूर्वक दीर्घ न करें। आपकी प्रकृति और सामर्थ्य को जितनी मात्रा का परिमाण अनुकूल पड़े, प्रणव-नाद के लिए उसे ही चयन कर लें।

प्रणव-नाद के समय आपका चिन्तन क्या होगा ? आप सागर हैं और विषय-रूपी समस्त नदियाँ आपमें प्रवेश कर रही हैं। गीता का यह श्लोक स्मरण करें और चिन्तन में लायें :

आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं
समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत्।
तद्वत्कामा यं प्रविशन्ति सर्वे
स शान्तिमाप्नोति न कामकामी ।।

आप सागर हैं जिसमें विषय-रूपी समस्त नदियाँ प्रविष्ट हो रही हैं। अब न तो कोई नदियाँ हैं और न ही विषय; क्योंकि आप स्वयं सागर-रूप हो गये हैं (२/७०)। उस समय के अपने भाव की कल्पना करें जिसका वर्णन मैं शब्दों में नहीं कर सकता। आपमें से प्रत्येक को स्वयं ही उस भाव को अनुभव करना है। प्रणव-नाद करें, पाँच मिनट तक यह भाव सतत बनाये रखें। डायरी में अपना अनुभव लिखें और मुझे बतायें कि इस प्रक्रिया से आपमें कोई अन्तर आया अथवा नहीं। निश्चित रूप से आप अन्तर का अनुभव करेंगे और परमात्मा की असीम कृपा से यदि आप पर समय और धैर्य की वृष्टि हो जाये और आप नित्यप्रति आधा घण्टा भी यह अभ्यास करें, तो स्वयं को त्रिगुणित आनन्द से भाव-विभोर हुआ साधक पायेंगे। संसार आपमें प्रवेश कर गया है। अब आपको क्षुब्ध (व्याकुल) करने के लिए संसार कहाँ गया?

(अनुवादिका : श्रीमती गुलशन सचदेव)

बालकों के लिए दिव्य जीवन :

घमण्ड हमेशा पतन की ओर ले जाता है

परम श्रद्धेय श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज

शिक्षक : ओ हो! गोपाल, आज तो तुम सब ठीक समय से आ गये हो। कृष्ण कहाँ है?

गोपाल : वह अभी कुछ ही देर में आने वाला है।

शिक्षक : गोपाल, यह तो बताओ कि कल वह लाल साफे वाला आदमी कौन था और उससे क्या झगड़ा हो रहा था?

गोपाल : जी हाँ, वह मेरा पड़ोसी है। वह बड़ा अमीर है लखपति। हमारे बड़े सेठ नेमिचन्द का वह मुनीम है। उसने एक गरीब किसान को कुछ सौ रुपये उधार दिये थे, जिनका ब्याज वह माँग रहा था और किसान ठीक समय पर वह ब्याज नहीं चुका सका था। इसी को ले कर झगड़ा था।

शिक्षक : यह बात है। वह किसान को धमका रहा था और उससे बहुत बुरी तरह पेश आ रहा था। वह अपनी सम्पत्ति, नाम, यश, पद और प्रभाव की बड़ी बड़ाई कर रहा था। तुमने देखा न कि वह अपनी सम्पत्ति को ले कर कितनी डींग मार रहा था? क्या तुम्हें उसका व्यवहार पसन्द आया?

गोपाल : नहीं, उसका व्यवहार किसी तरह उचित नहीं था। गरीब किसान के साथ उसने जैसा व्यवहार किया, उसकी हम निन्दा करते हैं।

शिक्षक : क्या तुम लोगों ने वह कहानी सुनी है 'चमकने वाली सभी चीजें सोना नहीं होतीं।'

कृष्ण : जी हाँ, वह तो एक घमण्डी हिरन के बारे में है। क्या मैं उसे सुना दूँ?

शिक्षक : हाँ, सुनाओ।

कृष्ण : एक छोटा बारहसिंगा पानी पीने के लिए एक झरने पर गया। नीचे नीले पानी में उसने अपनी परछाईं देखी। उसे अपनी परछाईं देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ। अपने सुन्दर सींग देख कर उसे अभिमान होने लगा। उसने सोचा कितने सुन्दर सींग मेरे पास हैं। मेरा बाकी सारा शरीर भी यदि ऐसा ही सुन्दर होता, तो इस धरती पर मैं सबसे सुन्दर प्राणी होता। लेकिन मैं अपनी इन पतली भद्दी टाँगों को देख नहीं सकता। इनके कारण मुझे शरम आती है।''

इतने में एक शेर की भयानक गर्जना सुनायी पड़ी। बारहसिंगा वायुवेग से भागा। वह अपनी उन्हीं टाँगों के सहारे, जिनकी वह निन्दा कर रहा था, छलाँग मार कर बहुत दूर निकल आया और शेर बहुत पीछे रह गया। लेकिन ज्यों-ही वह एक घने जंगल में घुसा, उसकी सींगें जो सुन्दर थीं और जिन्हें वह बहुत पसन्द करता था, एक झाड़ी में फँस गयीं और वह वहीं फँस गया। इतने में पीछे से भूखा शेर आया और उसे खा गया।

इस तरह आखिर, वे सुन्दर सींग ही, जिन्हें वह बहुत चाहता था, उसकी मृत्यु का कारण बनीं।

शिक्षक : बहुत सुन्दर। देखो बच्चो! वे सुन्दर सींग, जिन पर बारहसिंगे को बड़ा अभिमान था,

उसकी मौत का कारण बनीं। यह सच है कि घमण्ड हमेशा पतन की ओर ले जाता है। मनुष्य के पास ज्यों-ही कुछ धन, अधिकार, नाम और यश हो जाता है, वह घमण्डी बन जाता है। वह अपने को बहुत बड़ा समझने लगता है और दूसरों से घृणा करता है। उसमें अपने को दूसरों से बहुत बड़ा मानने का दोष आ जाता है और दूसरों के साथ मिलने-जुलने में वह अपना अपमान समझता है।

किसी में सेवा या आत्म-त्याग का गुण हो, तो वह कहने लगेगा कि 'मेरे समान कौन सेवा कर सकता है? मैं ब्रह्मचारी हूँ। मैं पिछले दश वर्षों से ब्रह्मचर्य की साधना कर रहा हूँ' इत्यादि। जिस प्रकार सांसारिक लोग सम्पत्ति पा कर घमण्ड से फूल जाते हैं, उसी प्रकार साधु और धार्मिक लोग भी अपने नैतिक गुणों की डींग मारने लगते हैं।

प्यारे बच्चो, याद रखो कि इस प्रकार का घमण्ड भौतिक तथा आध्यात्मिक प्रगति के मार्ग में बड़ा बाधक है। इसका परिणाम आखिर में पतन ही होता है।

शिवाजी के जीवन की एक घटना मुझे याद आती है। उससे बहुत अच्छी सीख मिलती है।

गोपाल : वह कौन-सी घटना है? उसे हम सुनना चाहते हैं।

शिक्षक : अच्छा सुनो।

एक बार शिवाजी ने एक किला बनाने के काम में एक हजार मजदूरों को लगाया। उन्हें इस बात का अभिमान था कि वह इतने लोगों का भरण-पोषण कर रहे हैं। शिवाजी के गुरु रामदास को यह मालूम हो गया। उन्होंने शिवाजी को बुला कर कहा कि उनके महल के सामने जो पत्थर पड़ा है, उसे तुड़वा दें। शिवाजी ने एक नौकर को वह पत्थर तोड़ने की आज्ञा दी। जब पत्थर तोड़ा गया, तो उस पत्थर के अन्दर से एक मेढक कूद कर बाहर आ गया।

रामदास ने शिवाजी से पूछा ''शिवा, इस पत्थर के अन्दर इस मेढक के खाने का प्रबन्ध किसने किया होगा?'' शिवाजी लज्जित हो गये। रामदास स्वामी के चरणों में झुक कर कहा ''गुरु महाराज, आप अन्तर्यामी हैं। जब मेरे मन में यह अभिमान पैदा हुआ कि मैं इन मजदूरों को खाना दे रहा हूँ, तब आप यह बात समझ गये। अब मेरे हृदय में विवेक जाग्रत हुआ है। मेरी रक्षा कीजिए। प्रभु, मैं आपका शिष्य हूँ।''

बच्चो! अपनी सफलता, सम्पत्ति, धन, शक्ति, यश आदि का अभिमान अपने अन्दर न आने दो। याद रखो कि सम्पत्ति, सुन्दरता, मान, प्रतिष्ठा, यौवन सब समाप्त हो जाते हैं; परन्तु सदाचार से पूर्ण जीवन पर किसी प्रकार की आँच नहीं आने पाती।

सभी वस्तुएँ ईश्वर की देन हैं। हमारा कुछ भी नहीं है। हम कुछ नहीं हैं। हम प्रभु के हाथों के उपकरण हैं। हमें सदा अपना मन सन्तुलित रखना चाहिए, मान-अपमान, अमीरी-गरीबी, शीत-उष्ण, सुख-दुःख आदि सबका समान भाव से सामना करना चाहिए। दुःख पड़े, तो उसे धैर्यपूर्वक सहना चाहिए। सुख में किसी प्रकार का घमण्ड या अभिमान नहीं करना चाहिए।

मेरा ख्याल है, आज यहीं समाप्त करें। आज के लिए इतना पर्याप्त है। तुम्हें मालूम ही है कि आज सुबह हम सब जल्दी में हैं। ईश्वर तुम सबका कल्याण करे !

लड़के : आपको बहुत धन्यवाद! मास्टर साहब। **(अनुवादक : त्रि. न. आत्रेय)**

गतांक से आगे :

वैराग्य की महिमा

परम श्रद्धेय श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज

श्रेष्ठ प्रशिक्षण विद्यालय

वैराग्य के विकास हेतु चिकित्सकों के पास अत्यन्त विशाल क्षेत्र है। वे प्रतिदिन अनेक ऐसे लोगों के सम्पर्क में आते हैं जो असाध्य रोगों से पीड़ित रहते हैं। प्रतिदिन वे शव-गृह में शव देखते हैं। इस प्रकार माया को उसकी नग्नावस्था में दर्शन करने के उन्हें असंख्य अवसर प्राप्त होते हैं। और वे मनुष्य के संसार में जीवन के अस्थायित्व से पूर्ण सहमत होंगे।

जेल के अधीक्षक तथा अन्य सभी अधिकारी गणों को भी वैराग्य के विकास हेतु अद्भुत अवसर प्राप्त होते हैं। यदि वे सत्य और मुक्ति हेतु लालायित होंगे, तो एक दण्डनीय कैदी की फाँसी का दृश्य उनकी आँखें खोल देगा।

हे सौम्य! आपकी मानसिक अवस्था वास्तव में सराहनीय है। एक संन्यासी का जीवन संसार में सर्वश्रेष्ठ है। एक सच्चा संन्यासी तीनों लोकों का स्वामी होता है। एक साधक भी यहाँ तक कि सारे संसार का स्वामी होता है। भगवान् श्री कृष्ण कहते हैं ''योग को जानने की कामना रखने वाला, यहाँ तक कि योग की खोज करने वाला भी ब्रह्मलोक के परे जाता है।''

मुझे आपको यह बताते हुए अत्यन्त हर्ष का अनुभव हो रहा है कि आपको अत्यधिक श्रेष्ठ संस्कार प्राप्त हुए हैं जो इसी जन्म में बाहर आना चाहते हैं। आपके भावी विकास और वृद्धि हेतु इनके संरक्षण और देखभाल की आवश्यकता है। संसार के प्रलोभनों में न फँसें। सावधान रहें। विवेकी बनें। आध्यात्मिक पथ के प्रारम्भिक साधक को सांसारिक बुद्धि वाले लोगों के साथ नहीं रहना चाहिए। उन्हें सत्संग का आश्रय लेना चाहिए। सांसारिक बुद्धि वाले मनुष्य का साथ मारक विष है। यदि आप उनका संग त्याग देंगे, तो आप लालसा के फेर में नहीं पड़ेंगे। जब तक आपको पूर्ण वैराग्य न प्राप्त हो जाये तथा जब तक आप संन्यास के मार्ग में स्थापित न हो जायें, तब तक आप ब्रह्मनिष्ठ गुरु के प्रत्यक्ष निर्देशन में एकान्त में निवास करें।

बहुत से जिज्ञासु जब मेरे पास आते हैं, तो प्रारम्भ में वे बड़े ही वैराग्य और उत्साह से पूर्ण रहते हैं; लेकिन वे इस उत्साह को लम्बे समय तक अथवा अपनी साधना के अन्त तक नहीं बनाये रख पाते। जब उनका कुछ कठिनाइयों से सामना होता है, तो वे अपने कदम वापस खींच लेते हैं। यह वास्तव में बड़े ही दुःख की बात है। बिना विचारे कोई काम न करें। दृढ़ संकल्प रखें। संन्यास के पथ पर दृढ़ रहें, जब तक आप अपने लक्ष्य पर न पहुँच जायें और साधना के फल का साक्षात्कार करें।

यदि आपमें उपरोक्त गुणों की कमी है, तो तीन वर्ष तक और इन्तजार करें। आध्यात्मिक साधना, आसन, प्राणायाम, एकाग्रता और ध्यान घर पर ही करें। शान्त ध्यान में गहरे उतरें। स्वयं को निष्काम्य

सेवा में भी लगायें। यह मन के शुद्धिकरण हेतु अनिवार्य है। अपना ब्रह्मचर्य बनाये रखें। यदि आपमें सिगरेट पीना, चाय-काफी पीना आदि जैसी कोई बुरी आदतें हैं, तो सबसे पहले उन्हें त्याग दें। सभी सद्गुणों का विकास करें। अपने मानसिक व्यवहार में परिवर्तनों पर ध्यान दें। फिर मेरे पास आयें। यहाँ आयें और कठोर परिश्रमी कर्मशील जीवन हेतु तैयार रहें।

कुछ जिज्ञासु बड़ी जल्दी में आते हैं। वैराग्य की कमी के कारण वे वापस चले जाते हैं। यह अच्छा नहीं है । यह साधकों के लिए एक चेतावनी है।

बहुत से जिज्ञासु कुछ अच्छा कार्य करना चाहते हैं जैसे लेखन, पूजा के लिए पुष्प चुनना, पुस्तकालय में किताबें जमाना, किसी प्रकार का नियन्त्रण अथवा प्रबन्धन। वे कुछ प्रकार के काम पसन्द नहीं करते जैसे जल भर कर लाना, झाड़ू लगाना, रोगियों की परिचर्या, भोजन पकाना, बैडपैन साफ करना आदि। वे इनको तुच्छ समझते हैं। वे निष्काम्य कर्म का सही भाव नहीं समझते हैं। वे अभी तक बाबू ही हैं।

प्रिय प्रभु! आपके भीतर मन्द आध्यात्मिक जाग्रति तथा मन्द प्रकार का वैराग्य है। आपको इन दोनों का विकास करना होगा। मन्द वैराग्य मात्र बुलबुला है। मात्र आवेग आपको वैराग्य मार्ग पर दृढ़ रहने में अधिक सहायता नहीं कर सकते।

घर को छोड़ कर कुछ समय के लिए, एक या दो सप्ताह के लिए एकान्त स्थान में निवास करें। ध्यान करें। गहन चिन्तन करें। अन्वेषण करें। आत्म-विश्लेषण करें और खोजें कि क्या आपके भीतर अपने परिवार वालों के प्रति अभी मोह (आसक्ति) है।

पक्का करें कि क्या आप इन्द्रिय-विषयों, सम्बन्धियों तथा सभी प्रकार की सुख-सुविधाओं को त्यागने में सक्षम हैं? क्या आप संसार से स्वयं को पूर्णतया विलग कर सकते हैं ? मात्र तभी आप मेरे पास आयें। मैं आपको बहुत थोड़े समय में योगियों का योगी बना दूँगा। बहुत से लोग हैं जिन्होंने एक या दो वर्षों के थोड़े से समय में आध्यात्मिक पथ में अच्छी प्रगति की। आप भी ऐसा कर सकते हैं। आध्यात्मिक गुरु के निर्देशों में अडिग आस्था की आपसे माँग है। यही आध्यात्मिक पथ में सफलता का रहस्य है।

(अनु. शिवानन्द राधिका अशोक)

भगवान् के आशीर्वाद की प्राप्ति

दिव्य भाव से अपने माता-पिता, बड़े-बूढ़ों, गुरु जनों, अतिथियों, रोगियों और महात्माओं की सेवा करें। क्षुधा-पीड़ितों को भोजन दें। रोगियों की शुश्रूषा करें। पीड़ितों को सान्त्वना दें। शोकग्रस्तों तथा सन्तप्तों का शोक-निवारण करें। नग्नों को वस्त्र-दान दें। अनपढ़-अशिक्षितों को विद्या-दान दें। दीन-निर्धनों को भोजन दें। दलितों को ऊपर उठायें। आपको भगवान् का आशीर्वाद प्राप्त होगा।

स्वामी शिवानन्द

बाल-स्तम्भ

अच्छाई का महाप्रसाद

स्वामी रामराज्यम्

रात-भर चिन्ता के मारे मैं सो नहीं पाया था; होटल के अपने कमरे में चहलकदमी करता रहा था। पिछली रात ट्रेन से उतर कर होटल में ठहर गया था। कमरे में पहुँच कर बैग खोलने की आवश्यकता पड़ी थी, तब पता चला की बैग वहाँ था ही नहीं। टैक्सी, जिससे सामान उतारा था, जा चुकी थी। अब मैं क्या करता! बैग वापस मिलने की कोई आशा नहीं थी।

सुबह के समय कमरे के फोन की घण्टी बज उठी थी। फोन पर नीचे स्वागत-कक्ष से सन्देश आया था कि कोई मुझसे मिलना चाहता है। मैं नीचे गया था। रात जिस टैक्सी से होटल पहुँचा था, उसका ड्राइवर खड़ा था। उसके हाथ में मेरा बैग था। वह लपक कर आगे बढ़ा और मेरा बैग मुझे पकड़ा दिया। उसके चेहरे पर ऐसा भाव था मानो उससे कोई अपराध हो गया हो। हाथ जोड़ कर वह बोला था ‘‘कल रात आपका सामान टैक्सी से उतारते समय इस बैग पर मेरी निगाह ही नहीं पड़ी। सुबह टैक्सी की सफाई करने लगा, तो यह बैग दिखलायी पड़ा। आप न जाने मेरे बारे में क्या सोच रहे होंगे, मुझे माफ कीजिएगा।’’ यह कह कर वह मेरे पैर छूने के लिए झुका था।

शीघ्रता से मैंने उसके झुके हुए शरीर को ऊपर उठाया था। उसकी दृष्टि से दृष्टि मिला कर बरबस बोल पड़ा था ‘‘क्षमा की बात तो बाद में, पहले यह बताओ कि तुम हो कौन इन्सान कि फरिश्ता। क्षमा तो मैं माँगता हूँ, क्योंकि तुम्हारे बारे में मैं कुछ और ही सोच बैठा था।’’

कुछ देर तक वह बिना कुछ बोले खड़ा रहा था। मेरी इच्छा हुई कि मैं उसे कुछ दे दूँ। फिर मैंने सोचा कि उसकी अच्छाई की कीमत चुकाने के लिए मेरे पास कुछ भी नहीं है और मैं उसकी तुलना में बहुत गरीब हूँ।

थोड़ी देर बाद वह चला गया था। उसके चेहरे पर अंकित अपराध-बोध और विनम्रता के भाव के पाशों ने मुझे ऐसा जकड़ लिया था कि दो-तीन मिनट तक मैं स्थिर, निश्चल खड़ा-खड़ा उसके जाने के बाद भी उसी ओर देखता रह गया था, जिस ओर वह वापस लौट गया था। आज भी उस भले आदमी द्वारा की गयी अच्छाई की स्मृति इतनी सजीव है कि मेरा बैग मुझे पकड़ाते हुए वह बहुधा मेरी आँखों के सामने उपस्थित हो जाता है।

बच्चो, एक भी अच्छी बात, एक भी अच्छी घटना की सूक्ष्म तरंगें दूर-दूर तक फैल कर अच्छाई का महाप्रसाद बाँटती हैं, बाँटती रहती हैं। इन तरंगों के कारण दूसरों के अन्दर की अच्छाई उभर कर ऊपर आने लगती है। भले बन कर अपनी अच्छाई का महाप्रसाद तुम भी बाँटने के लिए तैयार हो क्या? यदि हाँ, तो भला बनने का ये गुर याद रखना दूसरों का अहित न सोचना और न करना तथा दूसरों की बुराई (निन्दा) न करना, न सुनना। इस बात को न भूलना कि तुम्हारी अच्छाई अनगिनत लोगों को अच्छा बना सकती है।

जीवन का ध्येय : मोक्ष या मुक्ति

परम श्रद्धेय श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज

मोक्ष जीवन का परम लक्ष्य है। जीवन के उद्देश्य की पूर्णता मोक्ष है। मोक्ष की प्राप्ति अर्थात् जन्म-मृत्यु के बन्धन से मुक्ति पाने पर इस मर्त्यलोक का जीवन समाप्त होता है। अपने जीवन का वास्तविक लक्ष्य जान लेना ही मुक्ति या मोक्ष कहलाता है। मोक्ष से शाश्वत जीवन, अखण्ड आनन्द और अनन्त सुख प्राप्त होता है। मोक्ष विनाश नहीं है। मोक्ष तो तुच्छ और दम्भपूर्ण अहंकार का नाश है। जीवात्मा का परमात्मा के साथ ऐक्य ही मोक्ष है। जब इस तुच्छ अहं का नाश होता है, तब सम्पूर्ण और यथार्थ विश्वात्मा प्राप्त होती है और शाश्वत जीवन मिलता है।

मुक्ति आत्मज्ञान के द्वारा प्राप्त होती है। ज्ञान-प्राप्ति के लिए एकाग्रता की आवश्यकता होती है। एकाग्रता के लिए उपासना करनी होती है। उपासना से चित्तशुद्धि होती है। चित्तशुद्धि निष्काम्य कर्मयोग से होती है। निष्काम्य कर्म करने के लिए इन्द्रियों को नियन्त्रण में रखना आवश्यक है। इन्द्रियजय के साधन हैं विवेक और वैराग्य।

मोक्ष ऐसी वस्तु नहीं है जो पहले नहीं रही हो और नये से कुछ बनना पड़ता हो। मोक्ष कोई प्राप्तव्य पदार्थ नहीं है। वह तो प्राप्त है ही। सभी कुछ उस परब्रह्म के साथ एकरूप है। प्राप्त करने का पदार्थ तो यह है कि उस परब्रह्म के साथ हमारी पार्थक्य-भावना का, द्वैत की भावना का विनाश हो। मोक्ष उस पदार्थ के प्रत्यक्ष साक्षात्कार का नाम है जो चिरन्तन काल से रहा है, पर अज्ञानावरण के कारण अब तक हमसे अज्ञात था। परमानन्द की प्राप्ति तथा दु:खों की आत्यन्तिक निवृत्ति ही मोक्ष है। जन्म और मृत्यु से छुटकारा ही मोक्ष है।

मुक्ति अथवा मोक्ष आपका वास्तविक स्वरूप है। इस सत्य का ज्ञान प्रत्यक्ष अनुभव से प्राप्त किया जा सकता है। आत्म-चिन्तन के द्वारा अज्ञान के आवरण को विदीर्ण कर देना होगा। तभी आपमें आपकी मौलिक शुद्धता और दिव्य आनन्द का प्रकाश दीखेगा।

ब्रह्म, आत्मा, पुरुष, चैतन्य, बोध, भगवान्, अमरत्व, मुक्ति, पूर्णता, शान्ति, आनन्द, भूमा ये सारे शब्द पर्यायवाची हैं। आत्मानुभूति प्राप्त करने पर ही जन्म-मृत्यु के चक्र तथा उससे सम्बन्धित अन्यान्य विपत्तियों से छुटकारा मिलेगा। जीवन का ध्येय है परमानन्द अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति। नि:स्वार्थ सेवा तथा जप के द्वारा हृदय को परिशुद्ध तथा स्थिर करके निरन्तर ध्यान में लगे रहने पर ही मोक्ष प्राप्त हो सकता है।

मोक्ष परम प्रयोजन है। ज्ञान अवान्तर प्रयोजन है। जिस प्रकार केले का फल उसका परम प्रयोजन है और उसके पत्ते आदि परम प्रयोजन से पूर्व प्राप्त होने वाले अवान्तर प्रयोजन हैं, उसी प्रकार मोक्ष परम प्रयोजन है और ज्ञान उस मोक्ष से पूर्व प्राप्त होने वाला अवान्तर प्रयोजन है। ज्ञान तो उस परमानन्द की प्राप्ति का एक साधन मात्र है। **(अनूदित)**

समाचार और प्रतिवेदन

मुख्यालय के समाचार

'शिवानन्द होम' में सेवा

'शिवानन्द होम' के माध्यम से जरूरतमन्द और दीन-दु:खियों की सेवा करने का दिव्य जीवन संघ मुख्यालय का एक छोटा-सा प्रयास है। ये वे लोग हैं जिनको इलाज की जरूरत है, लेकिन जिनके पास कोई साधन नहीं है, न कोई व्यक्ति उनकी सहायता करता है, न ही उनके रहने के लिए कोई आश्रय है। उनकी देखभाल करने वाला कोई नहीं है। ये ऐसे लोग हैं जो संक्रामक बीमारियों से पीड़ित हैं।

'शिवानन्द होम' रोगियों के लिए उनका अपना घर है, जिनका कोई भी घर नहीं है अर्थात् जो बेघर हैं और जिनको समाज ने तिरस्कृत कर दिया है, चाहे कारण कुछ भी क्यों न हो इन सबका घर है 'शिवानन्द होम'। बीमारियाँ कई प्रकार की हो सकती हैं जैसे कुष्ठ रोग, टी.बी., फेफड़ों की अथवा अन्य प्रकार की टी. बी., लकवा, कैंसर, मिरगी, मधुमेह, गठिया, हृदयरोग, एड्स तथा एस.टी.डी., संक्रामक फोड़े-फुन्सियाँ, मानसिक विकलांगता, मनोरोग, चोट अथवा अन्य प्रकार की शारीरिक व मानसिक व्याधियाँ।

'शिवानन्द होम' के सभी अन्तेवासियों का रोगोपचार किया जाता है चाहे डाक्टर की देखभाल में दवाई खिलाना हो अथवा इंजेक्शन अथवा नली से भोजन खिलाना हो, जल-चिकित्सा हो, व्यायाम अथवा घावों की सफाई व मरहम-पट्टी हो, इन अन्तेवासियों अर्थात् रोगियों की तीन श्रेणियाँ हैं :

(१) अनाथ मरणासन्न रोगी जो अपनी बीमारी की अन्तिम अवस्था में आते हैं। रोग इतना बढ़ा हुआ कि इलाज सम्भव नहीं होता, कभी तो बेहोशी की अवस्था में ही यहाँ पहुँचते हैं और कुछ समय बाद अपना शरीर त्याग देते हैं। 'शिवानन्द होम' इस मृतक शरीर को अन्तिम संस्कार के लिए श्मशान घाट ले जाता है और उनकी अस्थियाँ पवित्र गंगा में प्रवाहित कर देता है।

(२) ऐसे रोगी जिनको शारीरिक बीमारी होती है, उनका इलाज करने के पश्चात् उन्हें यहाँ से वापस भेज दिया जाता है।

(३) ऐसे रोगी जो बहुत पुरानी बीमारी से पीड़ित हैं, मानसिक रूप से दुर्बल हैं, समाज से उपेक्षित हैं, इनके लिए दवा व इलाज के अतिरिक्त रहने के लिए अपने घर-जैसी सुविधा यहाँ उपलब्ध है, जहाँ ये एक-साथ अपने परिवार की तरह 'होम' में रह सकते हैं। आवश्यकता पड़ने पर एक-दूसरे की सहायता करते हैं। मेल-मिलाप की भावना से रहते हैं। एक-दूसरे को प्रेरणा देते हैं और आपस में सहयोग देने के लिए सक्रिय हैं। चाहे आप इनको सहयोगी कहें या रोगी, क्योंकि इनमें से प्रत्येक अंशत: रोगी है और

अपने अन्दर अंशत: सेवक है। सभी उस परमात्मा के यन्त्र हैं तथा सभी रोगी उसी परमात्मा के ही हैं।

इस माह 'होम' में चार मरीजों को इलाज करके ठीक किया गया। एक रोगी ने अन्तिम साँस में ॐ कहते-कहते शान्ति से शरीर त्याग दिया। यह आत्मा शाश्वत शान्ति, आनन्द एवं शाश्वत मुक्ति में चिर-विश्राम करे! ॐ शान्ति: शान्ति: शान्ति: !

''जब दूसरे सेवक असफल हो जाते हैं। सुख भाग जाते हैं। तब असहाय प्राणियों के सहायक हे प्रभो, तुम मेरे साथ निवास करो।

''परिवर्तन एवं विनाश को मैं चारों ओर देखता हूँ, लेकिन तुम अपरिवर्तनशील हो। हे प्रभो! तुम मुझमें निवास करो।''

(अज्ञात)

''जो भूखे हैं, उन्हें भोजन दें; जो वस्त्र-हीन हैं, उन्हें वस्त्र दें; जो रोगी हैं, उनकी परिचर्या करें। यह दिव्य जीवन है।'' **स्वामी शिवानन्द**

पावन-स्मृति में

श्री स्वामी श्रद्धानन्द माता जी

२९ जनवरी २००७ को श्रद्धेय श्री स्वामी श्रद्धानन्द माता जी के निधन की सूचना हम अत्यन्त शोक से दे रहे हैं। उनका देहावसान अत्यन्त पावन दिवस भीष्मपितामह एकादशी को हुआ। उस समय वह गुजरात राज्य के सूरत में गयी हुई थीं। संन्यास से पहले उनका नाम कमलावती था और अमृतसर के श्री पन्नालाल सेठ की धर्मपत्नी थीं। वे दोनों ही परम पूज्य सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के सान्निध्य में सन् १९३८ में आ गये थे और तब से ले कर १९६३ में पूज्य सद्गुरुदेव की महासमाधि तक वे गुरुदेव के सत्संग से लाभान्वित होते रहे। वे समय-समय पर आश्रम आते रहते थे।

सद्गुरुदेव की महासमाधि के उपरान्त दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज हुए। सन् १९८० में अर्थात् गुरुदेव की महासमाधि के १७ वर्ष बाद उन्होंने इन दोनों को संन्यास धर्म में दीक्षित करते हुए श्री स्वामी प्रशान्तानन्द सरस्वती और माता श्री स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती नाम दिये।

श्री स्वामी श्रद्धानन्द माता जी एक सरल, सहज और पावन आत्मा थीं। वे नित्य नियमपूर्वक भजन-प्रार्थना में संलग्न रहती थीं। कभी किसी से किसी प्रकार की शिकायत नहीं करती थीं। वह एक आदर्श साधक थीं।

श्री स्वामी श्रद्धानन्द माता जी की दिवंगत आत्मा की परम शान्ति और सद्गति के लिए हम परमात्मा से प्रार्थना करते हैं!

दिव्य जीवन संघ

महाशिवरात्रि महोत्सव

इस वर्ष १६ फरवरी को आश्रम मुख्यालय में महाशिवरात्रि महोत्सव मनाया गया। इस महोत्सव में शिवरात्रि के कुछ दिन पहले अर्थात् १२ फरवरी से १५ फरवरी तक आश्रम के अन्तेवासियों व भक्तों द्वारा प्रति दिन चार घण्टे पवित्र पंचाक्षरी मन्त्र का सामूहिक कीर्तन किया गया।

शिवरात्रि के दिन प्रात:कालीन ब्राह्ममुहूर्त प्रार्थना-ध्यान के बाद प्रभातफेरी निकाली गयी, विश्व-कल्याण के लिए यज्ञशाला में वसोरधारा हवन किया गया। प्रात: ७ बजे से सायं ७ बजे तक १२ घण्टों तक 'ॐ नम: शिवाय' का अखण्ड जप भी किया गया। श्री विश्वनाथ मन्दिर के पवित्र गर्भगृह में भगवान् शिव की पारम्परिक पूजा ८ बजे सायं प्रारम्भ हुई, जो अगले दिन ४ बजे प्रात: तक रात-भर चलती रही। वैदिक स्तोत्र नमकम्, चमकम्, के पाठ एवं वेदसार शिवसहस्रनाम अर्चना के साथ भगवान् शिव की अभिषेक पूजा की गयी। मन्दिर में उपस्थित भक्तों ने भी अभिषेक व अर्चना में भाग लिया।

सम्पूर्ण रात्रि में सुमधुर एवं आत्मा को भावविभोर करने वाले संगीतमय भजन व कीर्तन ने आश्रम के वातावरण को आनन्दमय व आह्लादित कर दिया। पूजा की परिसमाप्ति पर अन्त में मंगल आरती के पश्चात् अन्नपूर्णा भोजनालय में पवित्र प्रसाद वितरित किया गया।

विश्व-प्रार्थना

हे स्नेह और करुणा के आराध्य देव!
तुम्हें नमस्कार है, नमस्कार है।
तुम सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान् और सर्वज्ञ हो।
तुम सच्चिदानन्दघन हो।
तुम सबके अन्तर्वासी हो।

हमें उदारता, समदर्शिता और मन का समत्व प्रदान करो।
श्रद्धा, भक्ति और प्रज्ञा से कृतार्थ करो।
हमें आध्यात्मिक अन्तःशक्ति का वर दो,
जिससे हम वासनाओं का दमन कर मनोजय को प्राप्त हों।
हम अहंकार, काम, लोभ, घृणा, क्रोध और द्वेष से रहित हों।
हमारा हृदय दिव्य गुणों से परिपूरित करो।

हम सब नाम-रूपों में तुम्हारा दर्शन करें।
तुम्हारी अर्चना के ही रूप में इन नाम-रूपों की सेवा करें।
सदा तुम्हारा ही स्मरण करें।
सदा तुम्हारी ही महिमा का गान करें।
तुम्हारा ही कलिकल्मषहारी नाम हमारे अधर-पुट पर हो।
सदा हम तुममें ही निवास करें।

स्वामी शिवानन्द